IJAER/ Jan-Feb 2023/Volume-12/Issue-1 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

इक्कीसवी सदी के उपन्यासों में नारी चेतना का मूल्यांकन (मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'इदन्नमम' के संदर्भ में)

Suman Kumari,
Research Scholar, Dept of Hindi,
Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University

Dr. Poonam Devi,
Assistant Professor, Dept of Hindi,
Maharaja Agrasen Himalayan Garhwal University

सार–

मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास स्पष्ट करते हैं कि देश के स्वतंत्र होने के साथ स्थिति बदली है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नारी आगे बढ़ी है। उसे खुला एवं मुक्त वातावरण मिला है लेकिन शहरों तक, ग्रामीण स्तर पर नारी के जीवन में कोई बड़ा क्रांतिकारी परिवर्तन नहीं आया है। लेखिका की नायिकाएँ पुरुष सत्ता के वर्चस्व को तोड़ना चाहती है। उसे स्वामी नहीं, पति नहीं, एक सुलझा हुआ सहयात्री चाहिए जो सुख–दुख में कदम से कदम मिलाकर साथ चल सके। मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यासों में नारी चेतना के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए डॉ रामचंद्र तिवारी लिखते हैं ''बुंदेलखंड के आंचलिक जीवन को उसकी समग्रता में उकेरते हुए यह दिखाया है कि अब विंध्याचल की धरती भी अंगड़ाई लेकर जाग रही है। अनेक स्तरों पर नारी को पीड़ित और प्रताड़ित होते दिखाया गया है। मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के संघर्षों को स्थान मिला परंतु प्रधानता नारी संघर्ष की है। जिसका उद्देश्य सकारात्मक सोच एवं साधनों द्वारा सभ्य समाज का निर्माण करना है। समाज को सही दिशा निर्देशित करता है। 'इदन्नमम' उपन्यास की प्रमुख पात्र एक ऐसी नारी है, जो अपने युगबोध को वाणी देती हैं। अपने समय की राजनैतिक, सामाजिक, आर्थिक स्थितियों को परिभाषित कर रही हैं। न तो वह किसी पुरुष द्वारा निर्देशित राह पर चल रही हैं और न ही किसी पुरुष के सहारे चल रही हैं। नारी–जीवन के छोटे–छोटे संघर्षों की परिधि से ऊपर उठाकर यहाँ नारी को एक बड़े संघर्ष से रू–ब–रू किया गया है, जो स्वतंत्र होता है। नारी–लेखन की दिशा में मंदा एक उपलब्धि है और इस प्रकार का लेखन नारी–चेतना को सशक्त बनाने के लिए सार्थक संकेत है। एक सामान्य सी अल्पसाक्षर युवती भी यदि चाहे तो जन–जागृति और सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक परिवर्तन ला सकती है, इसी दास्तान को मैत्रेयी पुष्पा ने शब्दबद्ध किया है।

प्रस्तावना–

इक्कीसवीं सदी की नारी–चेतना आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तनों तथा घटनाओं की उपज है। आज नारी की अस्मिता अपने उबाल पर है। आज नारी अपने अस्मिता के प्रति सशक्त रूप से चेतनाशील है। नारी–चेतना से जन्मे विचारधारा नारी को केवल स्वावलंबी बनने की प्रेरणा नहीं दे रहे हैं, बल्कि प्राचीकाल से

जो उसका शोषण और उत्पीड़न होता रहा है, उसके विरुद्ध संघर्ष करने की शक्ति प्रदान करते हैं। नारी को जहाँ 'मैं' की चिंता का एहसास है, वहीं से नारी–चेतना की शुरूआत है। नव–चेतना के विविध आयामों ने नारी–चेतना को शक्ति प्रदान की है। उसने सामाजिक–धार्मिक रीति–रिवाजों के विरुद्ध केवल आवाज ही बुलंद नहीं की है, बल्कि विरोध भी दर्ज किया है। निश्चय ही इस सदी की नारी–चेतना ने सदियों से चली आ रही पुरानी रूढ़िवादी विचारधाराओं एवं मान्यताओं की उपेक्षा करना आरंभ कर दिया है। नारी अब इन रूढ़िवादी बाह्याडंबरों के बंधन से मुक्त हो रही है। ''21वीं सदी की नारी–चेतना उसके अस्तित्व को जहाँ बल प्रदान करती है, वहीं उसकी अस्मिता को एक पहचान भी देती है।''[1] आज नारी के चेतना में सकारात्मक बदलाव दिखाई दे रहे हैं, चाहे वह ग्रामीण नारी हो या शहरी। जमाने के साथ उन्होंने अपने जीवन को बदलना उचित समझा, जो उनकी चेतनाशीलता का परिचायक है।

लेखिका ने यह संकेत दिया है कि अब ठेठ ग्रामीण और लगभग अशिक्षित नारियाँ भी अपने अधिकारों के प्रति सचेत हो रही है और उनमें भी जनता को संगठित करने का साहस और अपनी शक्ति का एहसास होने लगा है।'' लेखिका का मत है जो सर्वथा सत्य प्रतीत होता है कि नारी शिक्षा और स्वावलंबन के बल पर कहीं हद तक अपनी समस्याओं का समाधान कर सकती है। ''स्त्रियों को चाहिए कि वे पुरुषों को झुकाने से पहले अपना हीन भाव दूर करें।'' उसकी स्वतंत्रता का मूल्य पुरुष की नजरों में नहीं अपितु नारी की अपनी तथा अपनी तथा नारी समाज की नजरों में भी होना चाहिए। लेखिका के नारी पात्र न केवल अपने व्यक्तिगत हित के लिए संघर्ष करते हैं अपितु समाज के लिए भी संघर्ष करते नजर आते हैं।

नारियों में चेतना–शक्ति का विकास होना जिससे वे अपने भले–बुरे का ज्ञान प्राप्त कर सकते हैं। ''वास्तव में नारी–चेतना गहरे रूप में नारी–अस्मिता का बोध कराती है। नारी को अपनी पहचान बनाने की प्रेरणा देती है। नारी अपना अस्तित्व बनाए रखने हेतु कड़ा संघर्ष करती है। चेतना नारी को अपना अंतः और बाह्य चीजों व घटनाओं को समझने की प्रेरणा देती है। अपने हित व अहित के प्रति उसे जागरूक व चेतनाशील बनाती है।''[2] नारी की यही चेतना–शक्ति मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास 'इदन्नमम' में दिखाई देता है।

मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में ग्राम्य–परिवेश में नारी को केंद्र में रखा है। मैत्रेयी पुष्पा ने अपने उपन्यासों में सामाजिक, आर्थिक, शैक्षिक, राजनैतिक, धार्मिक आदि क्षेत्रों में नारी को अपने हक व अधिकार के प्रति सशक्त रूप से मजबूती के साथ चित्रित किया है। आज की नारी सोचती है कि हमारे सामने क्या समस्या है? आज की नारी सोचती है कि अब सहानुभूति के आधार पर नहीं अपनी लड़ाई वह स्वयं अपने हिम्मत व साहस से लड़ेगी। मैत्रेयी पुष्पा की नारी अपने अधिकारों को पाने के लिए जागृत हो गई है, उसमें चेतना का भाव जागृत हो गया है।

मैत्रेयी पुष्पा ने उपन्यास 'इदन्नमम' में विंध्य अंचल में बसे गाँवों– श्यामली और सोनपुरा के लोक–जीवन को बड़े ही आत्मीय लगाव के साथ चित्रित किया है। इन गाँवों में धूल है, फूल है, नदी, पहाड़ और जंगल–झाड़ियाँ हैं, सत्य–असत्य, न्याय–अन्याय है, रूढ़ियों और लोक–परंपराओं में जीवन–यापन करने वाले लोग हैं। 21वीं सदी की देहरी पर खड़े ये गाँव अब भी पिछड़े हैं, किंतु अब विकास और नई चेतना की चमक भी आने लगी है।

उपन्यास के केंद्र में तीन नारी–पात्रों की जीवन–गाथा है। बऊ (दादी), प्रेम (माँ) और मंदाकिनी (मंदा) इन तीनों नारी के चरित्रों के माध्यम से मैत्रेयी पुष्पा ने तीन–तीन पीढ़ियों की कथा कही है। तीनों नारियों की अपनी–अपनी जिंदगी है। अपने–अपने जीवन आदर्श हैं। तीनों की कहानी साथ–साथ समांतर चलती है। अन्य नारी–पात्रों में कुसुमा भाभी का उल्लेख भी जरूरी है, क्योंकि कुसुमा भी अपना जीवन अपने ढंग से, अपनी अस्मिता, स्वयं की निर्णय–शक्ति और संघर्षशीलता का परिचय देती है। इस प्रकार इन नारी–पात्रों के माध्यम से एक समांतर नारी–संसार का परिचय हमें मिलता है। एक ऐसे संसार का जहाँ पर आधुनिकता, कूटनीतिक, राजनैतिक, कलाबाजारियों और बड़बोलेपन की बात किए बिना भी नारी को ठोस और यथार्थ जीवन–संघर्ष का परिचय व साक्षात्कार होता है, बल्कि 'इदन्नमम' उपन्यास की नारियाँ भारतीय समाज के शायद सबसे बड़े नारी–समुदाय की सशक्त प्रवक्ता बनकर उभरती हैं, जो एक बहुत बड़े हिस्से क प्रतिनिधित्व है।

'इदन्नमम' उपन्यास की पहली पीढ़ी बऊ (दादी) है, जो अपने जीवन में अपने तरीके से संघर्ष करती हुई दिखाई देती है। बऊ (दादी) जवानी में ही विधवा हो जाती है, किंतु वह अपने जीवन में किसी भी को अपनी तरफ ऊँगली उठाने का मौका नहीं देती और वह अपने इकलौते बेटे महेन्द्र सिंह को पाल–पोस कर बड़ा करती है, लेकिन महेन्द्र सिंह का अचानक देहांत होने से बऊ और बहू प्रेम, पोती मंदा को कुछ समय के लिए अकेले होने का एहसास होता है, किंतु फिर वे संघर्ष करते हुए आगे बढ़ जाती हैं। महेन्द्र सिंह के देहांत होने के कुछ दिनों बाद प्रेम (माँ), अपने जीजा रतन यादव के साथ भाग जाती है, तब बऊ (दादी) और अकेली हो जाती है। बऊ मंदा पोती का पालन–पोषण करती है। प्रेम (माँ) के भाग जाने के बाद बेटी मंदा और जमीन–जायदाद को भी अपने नाम करना चाहती है, लेकिन बऊ ऐसा नहीं होने देती है, वह मंदा को भूमिखोरों व लूटेरों से बचने के लिए दूसरे गाँव श्यामली पंचम सिंह के पास चली जाती है। बऊ बहू प्रेम के घर छोड़कर चले जाने पर मंदा से कहती है– ''बिन्नू, वे जमाने तो सतियों के थे। कायदा से तो सती हो जाने चाहिए थे, पर हमारी राह में महेन्द्र की किलकारी आ गई। वेद–पुराण में भी यही बताया गया है कि बाल–बच्चे को माता की सही पाछें हैं, माता पहले और फिर ससुर की, अपने पति की वंशबेल की चिंता। सो बिटिया, उमर का हींसा, देह के तकाजे जरा डारे जई देहरी के होम कुंड में।''[3] बऊ (दादी) समाज एवं परिवार में वंश–परंपरा को आगे बढ़ने के लिए किसी दूसरे पुरुष के साथ विवाह नहीं की, न ही सती हुई। इस तरह बऊ (दादी) अपने नारी–जीवन के प्रति सशक्त रूप से जागृत दिखाई देती है।

बऊ (दादी) मंदा के हक व अधिकार के प्रति जागृत दिखाई देती है। मंदा की माँ प्रेम अपने प्रेमी रतन यादव के बहकावे में आकर समस्त संपत्ति को हड़पने के लिए बऊ (दादी) के खिलाफ अदालत में मुकदमा दायर करती है, तो बऊ अपनी हिम्मत और हौसला नहीं हारती। बऊ (दादी) अदालत में चीफ साहब से कहती है– ''चीफ तुम फिकिर जिन करो। लड़ने दो उस कंजरी को.... जब तक इस काया में पिरान है, लड़ेंगे हम भी। पूरी जिंदगानी हमने लड़ाई लड़ी है। हँसी बेल नहीं है जिमिंदारिन बने रहना।''[4] बऊ बूढ़ी नारी होकर भी वह मंदा की माँ प्रेम के खिलाफ लड़ने की हिम्मत व साहस मन में रखती है। बऊ, मंदा का जमीन–जायदाद उसके हक के लिए सुरक्षित रखने के प्रति चेतनाशील दिखाई देती है।

मंदा की माँ प्रेम समाज एवं परिवार की नजर में कुलटा है, लेकिन वह भी अपनी लड़ाई खुद लड़ती हुई मंदा को गाँव की बदहाली, गरीबी, सामंती और पूँजीवादी वर्ग के साथ आदिवासियों का प्रत्यक्ष परिचय कराती है।

प्रेम (माँ) बचपन में मंदा को छोड़कर अपने जीजा रतन यादव के साथ भाग जाती है, लेकिन बाद में प्रेम (माँ) बेटी मंदा के पास गाँव सोनपुरा अपना पश्चाताप करने आती है, लेकिन बऊ (दादी) प्रेम को घर में घुसने नहीं देती है। फिर मंदा को वापस अस्पताल में ठहराने के लिए ले जाती है। प्रेम अपने किए पर शर्मिंदा है, वह रतन यादव के व्यवहार से भी घृणा करने लगती है। प्रेम अपने मन की बात मंदा से कहती है– ''रतनसिंह से हमारा वास्ता नहीं रहा। हेलमेल उसी दिन टूट गया, जब उसने हमारी जमीन बिकवा दी। हमें कैसे–कैसे मजबूर किया था, वह कथा तो रहने दो बिन्नू ! और बहुतेरे दुःख हैं कहने–सुनने को।''[5]

प्रेम (माँ) अपने साथ हुए शोषण, अत्याचार से संघर्ष करते हुए आगे बढ़ती है और सशक्त रूप से जागरूक दिखाई देती है। प्रेम कहती है– ''खेती का पूरा–पूरा पइसा हड़प रहे थे। हमने कहा, चाहे पिरान कढ़ जाएँ यह अमानत न देंगे किसी तरह। सोनपुरा की धरती हमारी बिटिया की बिरासत है, उसके पिता की जायदाद थी। मंदा का हक बनता है उस पर, छूने नहीं देंगे किसी को।''[6] इस तरह प्रेम अपने ऊपर हुए शोषण व अत्याचार के खिलाफ संघर्ष करती हुई मंदा के हक व अधिकार के प्रति जागरूक नारी के रूप में दिखाई देती है।

'इदन्नमम' उपन्यास में तुलसी राउताईन का जागृत रूप दिखाई देता है। जब क्रैशर मालिक अभिलाख सिंह और काम करने वाले मजदूरों के बीच मेहनत व हक के लिए झगड़ा होता है, तो उसी बीच तुलसिन दहाड़ मारती हुई कहती है– ''अपनी बेटी और बहन का बदला न काढ़ा तो राउतिन रहीं। खून पीऊँगी आज अभिलाख की छाती का। हरामी जगेसर का ! जान लेकर छोडूँगी।''[7] तुलसिन राउतिन अपने ऊपर हुए शोषण, अत्याचार का बदला लेने के लिए साहस व हिम्मत रखती है।

'इदन्नमम' उपन्यास में नैतिकता एवं नारी–विशयक मान्यताएँ कुसुमा भाभी के माध्यम से व्यक्त होती है। आत्मनिर्णय और नए विचारधारा से निर्मित यह नारी का चरित्र नव नारी–चेतना का प्रतीक मालूम पड़ता है। कुसुमा को पति यशपाल त्यागकर दूसरी शादी कर लेता है, तो कुसुमा भी अविवाहित चाचा ससुर दाऊजू, अमरसिंह की ओर आकर्षित होकर जाती है। दोनों एक–दूसरे को प्रेम करने लगते हैं और उससे उत्पन्न संतान पर गर्व भी करती है। कुसुमा यह सब कुछ उसी परिवार में पति की आँख के सामने रह कर करती है। परिवार में सास और अन्य लोगों के द्वारा विरोध करने पर कुसुमा सास को करारा जवाब देती हुई कहती है– ''आगिन साच्छी करके ही आए थे तुम्हारे पूत के संग। सात भाँवरे फिरकें ! लिहाज रखा उसने ? निभाया संबंध ? दूसरी बिठा दी हारी छाती पर ! उसी दिन से कोई संबंध, कोई नाता नहीं रह हमारा। जो ब्याकर लाया था उससे ही कोई ताल्लुक नहीं तो इस घर में हमारा कौर ससुर और कौन जेठ ?''[8]

इस तरह कुसुमा अपने वैवाहिक बंधनों को नकारते हुए अपने चाचा ससुर दाऊजू से संबंध बनाकर अपना स्वतंत्र जीवन जीती है, लेकिन कुसुमा की सास व पति उसके संबंधों को देखकर और क्रोधित हो जाते हैं और उसके प्रेम–संबंध को पाप कहते हैं। जो उसके पेट में पल रहे गर्भ को किसी दूसरे का कुकर्म बताते हैं, जो उसे दाऊजू का नाम लेती है, पति यशपाल की यह बात सुनकर कुसुमा लाज–लिहाज को त्यागकर चींघाड़ मारती हुई कहती है– ''ओ न कीलें ! खैर मना कि बच्चा दाऊजू का है। नही ंतो यह किसी भी का होता, जात का आन जात का। गैल चलते आदमी का। तुम होते कौन हो हमारी नाकेबंदी करने वाले ? तुम्हें क्या हक.... कुत्ता की जात नहीं गिनते हम तुम्हें।''[9] कुसुमा अपने प्रेम–संबंध को पाप नहीं मानती है, अगर उसके

उस संबंध को कोई पाप कहे तो उसे सहन नहीं होता, इसलिए वह अपने पति यशपाल को क्रोधित होकर उसे कह देती है कि यह बच्चा ते दाऊजू का है। अगर अन्य जाति–बिरादरी का भी होता तो भी मैं जन्म देती। इस तरह काम–संबंधों को लेकर दाऊजू के साथ कुसुमा का संबंध बहुत बड़ा कदम है।

कुसुमा अपने ऊपर हो रहे शोषण व अन्याय के खिलाफ उठकर मुकाबला करती हुई अपने अस्तित्व एवं अस्मिता के प्रति सशक्त रूप से जागृत होकर अपनी बात बऊ से कहती है– ''बऊ, उसी बाबत थूक दिया हमने भीख–दान किसी और को देना। महनत–मजूरी करेंगे पर कुँवर को उस अन्यायी के खाते नहीं डालेंगे।''[10] कुसुमा अपने अस्मिता के प्रति सचेत दिखाई देती है। वह मेहनत–मजदूरी कर लेगी, परंतु अपने बेटे कुँवर के प्रति अन्यास व गलत नहीं होने देगी। कुसुमा अपने अस्तित्व के प्रति सजग व जागृत नारी के रूप में दिखाई देती है। जिस तरह कुसुमा अपने अस्तित्व एवं अस्मिता के प्रति जागरूक है, वैसे ही वह अपने हक व अधिकार के लिए जागृत होती है। कुसुमा दादा के जमीन–जायदाद के वितरण के प्रष्न पर समान हिस्सा लेने की बात कहती है– ''मंदा, दादा की जंग का हम पूरा–पूरा हिस्सा लेंगे। अपने नाम लिख लिया समूचा का समूचा।'' इस तरह कुसुमा दादा की सभी जमीन–जायदाद में अपना हिस्सा लेने की बात कहती हुई अपनी चेतनाशीलता का परिचय देती है। इस प्रकार कुसुमा भाभी का व्यक्तित्व परिवार व समाज की परिभाशा में सामान्य और गौण होते हुए भी साहित्यिक मूल्यवत्ता से महत्वपूर्ण है।

'इदन्नमम' उपन्यास की मुख्य चरित्र मंदा है। मंदा अपनी दादी की नजर में बाबरी सिर्रिन है, तो शोशकों का प्रतिनिधित्व अभिलाख उसे 'कालभैरवी' कहता है। सरकारी तंत्र के लोग 'महाकाली' का संबोधन करते हैं, महाराज उसे 'रानी लक्ष्मीबाई' की तरह हौसले वाली मानते हैं और मोदिन जैसी ग्रामीण नारी के विचारों में उसका मन 'दरपन सा साफ' है। इस तरह मंदाकिनी (मंदा) के चरित्र में गाँव से होकर शहर की कड़ी तक जोड़ने के लिए अनेक पहलू आकर जुड़ते जाते हैं। जेसे वह समाज–सेविका बनकर शोषण व अत्याचार के विरूद्ध लोगों को जागरूक कर खड़ी होती है। धार्मिक संस्कारों को मानने वाली बनकर गाँव–गाँव रामायण का कथा कहने जाती है और अंत में आकर राजनैतिक विचारधारा से जुड़कर गाँवों के साथ–साथ आस–पास के ग्रामीण–जनों को राजनीति (वोट) के प्रति जागरूक करती है। मैत्रेयी पुष्पा ने समय की महत्ता को पहचान कर मंदा को उसी ओर ले जाना उचित समझा।

मंदा गाँव वालों को क्रैशर मालिक अभिलाख सिंह के शोषण व अत्याचार के प्रति गरीब मजदूर को अन्याय के प्रति लड़ने के लिए तैयार करते हुए कहती है– ''जागो रे जागो ! चेतो रे चेतो! छोटे–बड़े, नन्हे–मुन्ने, बूढ़े–पुराने, नए–जवानों के अलावा ढोर–चोंपे, परेवा–पंछी, नदी–ताल, पेड़–रूख, हवा–पानी यहाँ तक कि दसों दिशाओं को जगाना होगा, बचने–बचाने को जूझना होगा।''[11] मंदा इस तरह पूरे गाँव में नई जन–जागृति लाकर लोगों को शोषण व अन्याय के प्रति सचेत कर स्वयं चेतनाशील बनती है।

मंदा नारी होने के नाते दूसरी नारी के साथ न्याय चाहती है। मंदा रूढ़िवादी विचारधारा को खत्म करना चाहती है, जिसके चलते नारी के लिए अलग से नियम का निर्धारण है तथा अगर वही गुनाह पुरुष करे तो उसके लिए कोई मापदंड नहीं। इसी रूढ़िवादी परंपरागत विचारधारा को लेकर मंदा विरोध करती हुई अपनी माँ के साथ हुए दुर्व्यवहार के प्रति उत्तर चाहती हुई बऊ (दादी) से इन रूढ़िवादी बाह्याडंबरों व रीति–रिवाजों को आँख मूँद कर अपनाने की बात बऊ से कहती है– ''सो हम कहत हैं बऊ, पुरानी परंपराओं की जो थोथी और

दुखदायिनी नीति है, उसकी अंधभक्ति न करो।''[12] मंदा दादी को यह बात समझाते हुए कहती है कि पुरानी परंपरा की आँख बंद करके उस पर विष्वास मत करो। जो नारी–जीवन के लिए कष्ट व पीड़ादायक है, जिसमें नारी ही पीड़ित होती है। इस तरह मंदा धार्मिक रूढ़िवादी परंपरा पर सोच–समझ कर उसे अपनाना चाहती है।

आगे मंदा गाँव के लोगों के साथ–साथ आस–पास के गाँव के लोगों को राजनैतिक विचारधारा के प्रति जागरूक कर उसे अपने वोट के प्रति सजग करती हुई दिखाई देती है। जब राजा साहब वोट माँगने के लिए गाँव में आते हैं और खासकर वे मंदा को चुनाव में वोट देने की बात करते हैं, तब मंदा राजा साहब से कहती है– ''सो हिसाब किताब सीख गए हैं ग्रामवासी। गणित लगा रहे हैं गंवई लोग। ऐसा नहीं कि कुछ भी न मिलता हो। हर वोटर को उसके वोट की कीमत धरते हैं आपके कार्यकर्ता। दो सौ, तीन सौ, चार सौ और पाँच सौ तक में निपटा लेते हैं सौदा, परंतु चुनाव की अवधि तो बहुत लंबी होती ह! पाँच साल तक की दवा–दारू, इलाज–उपचार के लिए काफी नहीं रहते चार सौ, पाँच सौ।''[13] इस तरह मंदा राजा साहब को अपने वोट के महत्व के प्रति लोगों में जन–चेतना की बात को सजगता के साथ कहती है कि अब गाँव के लोग समझदार हो गए हैं और अब की बार निर्णय कर लिए है, सो ग्रामीण लोगों के निर्णय की बात को मंदा राजा साहब से कहती है– ''सो क्या करें ? अबकी बार ठान लिया है कि हम 'कहे' की नहीं करे की परतीत करेंगे और अगर नही तो ऐन खाली उठा ले जावें पेटी आपके आदमी। वोट नहीं पड़ेगा एक भी! कहकर मंदाकिनी हल्के से मुस्कुरा दी और भीतर चली गई।''[14] इस बार मंदा कृत संकल्प होकर दृढ़ निश्चय के साथ ठान लेती है कि अब वे झूठे प्रलोभन पर विष्वास नहीं करेगी। गाँव का कोई भी व्यक्ति राजा साहब को वोट नहीं देगा। मंदा के कुशल मार्गदर्शन व नेतृत्व में गाँव वाले चुनाव का बहिष्कार करते हैं। मैत्रेयी पुष्पा ने 'इदन्नमम' में मंदा के माध्यम से अपने इसी विष्वास को आधार देने का प्रयास किया है।

निष्कर्ष–

मैत्रेयी पुष्पा के साहित्य में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक सभी प्रकार के संघर्षों को स्थान मिला परंतु प्रधानता नारी संघर्ष की है। जिसका उद्देश्य सकारात्मक सोच एवं साधनों द्वारा सभ्य समाज का निर्माण करना है। समाज को सही दिशा निर्देशित करता है। मैत्रेयी पुष्पा ने सोनपुरा गाँव के बहाने पूरे बुंदेलखंड की करुण–कथा इस उपन्यास में सुनाई है। आज पूरा बुंदेलखंड गिट्टी के क्रेशरों की धड़धड़ाहट से काँप रहा है, उसकी धूल से लोगों की जीवन–शक्ति और खेतों की उर्वरक–शक्ति नष्ट हो रही है। गाँव के शोषित व पीड़ित लोग असंगठित और अशिक्षित हैं, उन्हें राजा साहब जैसे पूर्ण सामंत और अभिलाख जैसे गुंडे–व्यापारी, ठेकेदार मिलकर शोषण कर रहे हैं। जरूरत की अहम सुविधाओं से ग्रामीण मोहताज हैं। जिस आत्मविष्वास और बारीकी से मैत्रेयी पुष्पा ने इस कथानक की शुरूआत, विकास और चरमोत्कर्श किया, वह तारीफ के योग्य है। मुँहजुबानी और सैद्धांतिक क्रांति से दूर रहकर इस उपन्यास 'इदन्नमम' के नारी–पात्र व्यावहारिक रूप से क्रांति में जुटते हैं, चाहे उन्हें हानि ही क्यों न उठानी पड़ रही हो। बऊ (दादी), प्रेम (माँ) और मंदा तीन पीढ़ियों के नारी के साथ–साथ कुसुमा भाभी भी अपने जीवन में सघर्ष करती हुई अपने पूरे हिम्मत व साहस के साथ उपन्यास में प्रकट होती है और समाज में फैले हुए सर्वत्र रूढ़िवादी रीति–रिवाजों, परंपराओं के प्रति जागृत होकर ग्रामीण जन–जीवन को उसके हक व अधिकार के प्रति जागरूक करती हुई स्वयं चेतनाशील दिखाई देती है।

संदर्भ–सूची–

1. सिंह, बी.एन. एवं जनमेजय सिंह. नारीवाद. दिल्लीः रावत पब्लिकेशन, 2003, पृ. 396.
2. सिंह, बी.एन. एवं जनमेजय सिंह. नारीवाद. दिल्लीः रावत पब्लिकेशन, 2003, पृ. 184.
3. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 307.
4. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 77.
5. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 312.
6. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 312.
7. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 329.
8. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 166.
9. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 141.
10. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 284.
11. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 301.
12. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 224.
13. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 309.
14. पुष्पा, मैत्रेयी. इदन्नमम. नई दिल्लीः राजकमल प्रकाशन, दूसरी आवृत्ति, 2009, पृ. 353.